ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-2, No.-2, **PP-84-86**,YEAR-2015

कला का प्रचलन इस्लाम धर्म में

❑ **डॉ0 गुलाब धर**

सारांश– *धार्मिक परिवेश में सभी युगों में कला को आस्था और विश्वास के साथ अपनाया गया। यदि मनुष्य जाति के विकासक्रम में कला का सहयोग न हुआ होता तो मानव में इतनी सहज शालीनता देखने को न मिलती। कला के सम्पर्क से मनुष्य की प्रवृत्तियों में कोमलता का समावेश हुआ और उसको यह बुद्धि मिली कि कोई निरपेक्ष सत्ता इस जगत् के मूल में जड़ित है, जिसके द्वारा यह जगत् संचालित हो रहा है, जिसको उजागर किया कला ने। संसार के सभी देशों की आदिम संस्कृति में कला को इसी रूप में पूजा एवं अपनाया गया जहाँ तक इस्लाम धर्म में कला का प्रश्न है, कि धार्मिक जीवन बिताने के लिये वहाँ कला को बाधक जानकर छोड़ दिया गया किन्तु सर्वत्र सभी युगों में इस्लाम धर्मानुयायियों का ठीक यही आचरण कला के प्रति रहा हो, ऐसा भी नहीं है, अनेक सामाजिक निषेद्यों और धार्मिक प्रतिबन्धों के होते हुए भी कला को और विशेष रूप से स्थापत्य एवं चित्रकला को वहीं बड़े साहस और उत्साह उल्लास के साथ अपनाया भी गया। इस्लाम धर्मानुयायियों के इस मिले जुले दृष्टिकोण के फलस्वरूप कला के तथा चित्रकला के रूप में आज जो थाती में उपलब्ध है वह किसी भी प्रकार कम नहीं है। इस्लाम धर्म के साथ–साथ कला के सम्बंध के बारे में लगभग 6वीं श.ई. से आरम्भ होती है।*[1]

विश्व के धर्म प्रवर्तक महात्माओं में महात्मा मानी का नाम उल्लेखनीय है कई शताब्दियों तक ईरान और सम्पूर्ण पश्चिम एशिया से उनके द्वारा प्रवर्तित धर्म भावना का एकाधिकार रहा। वह महात्मा धर्म गुरू के अतिरिक्त एक चित्रकार मीथा जिसके नाम से स्वतंत्र मानी शैली का प्रचलन हुआ उसने धर्म की अनेक पोथियों को चित्रित किया और उसके अनुयायी चित्रकारों ने उसकी इस कला प्रिय रुचि को 10वीं शताब्दी तक बनाये रखा। इनके धर्म की अनेक चित्रत पोथियों को जर्मन विद्वान लफॉक ने प्राप्त किया जो सम्प्रति वर्लिन के संग्रहालय में सुरक्षित है। मध्य एशिया तुरकार के एक भग्न मन्दिर में भी मानी शैली के चित्र मिले हैं, जिनमें से कुछ का विषय भारतीय है। श्री नानालाल चमनलाल मेहता का इस सम्बंध में कथन है कि सन् 923 ई. में मानी धर्म के 14 थैले भर ग्रंथ बगदाद में जलाये गये थे और उसी वक्त कहा गया है, चित्रों में लगे हुये सोने चाँदी का एक प्रवाह सा बह चला था। कला के प्रति इसी धर्मद्रोह के कारण ईरान के बादशाह ने 274 ई. में शूली पर चढ़ाकर महात्मा मानी का अंत किया। इस्लामी सभ्यता के चित्र दिवारों पर बने हैं। 8वीं शताब्दी के चित्र कुरोर अम्र के शिकारगाह में मिले।[2] मुहम्मद गजनवी (998–1030 ई.) ने भी अपने अपने पराक्रमों और विजय के चित्र बनवाकर अपने शाही महलों में सुसज्जित किया था। इसी युग में अबासीद तथा उम य्यद प्रभृति खलीफाओं के प्रासादों में भी उत्तम चित्र सज्जित होने का पता चलता है। इस्लामी सभ्यता के सम्बंध में यह एक स्मरणीय बात है कि जब तक उसकी स्थिति केवल अरब में ही बनी रही, तब तक की अरबी पोथियाँ चित्ररहित थी, किन्तु अरबों ने जब स्वेन, मिस्र ईरान और भारत आदि विभिन्न देशों में अपनी सल्तनत को फैलाया तभी से उनका ध्यान चित्रकला की ओर उन्मुख हुआ। अरब के विजेता अपने द्वारा विजित देशों के चित्रकारों की कला से प्रभावित हुए और तब से उन्होंने चित्रकारों को आश्रय देना आरम्भ किया। भारत में मुगल की कला प्रतिष्ठित हो जाने से पूर्व इस्लामी स्थापत्य पर भारतीय कला का

सहा. आचार्य चित्रकला विभाग ज.रा.वि.वि.वि.,चित्रकूट, (उ.प्र.)भारत

प्रभाव पड़ चुका था। मुहम्मद गजनवी अपनी विजय यात्राओं में अनेक भारतीय कलाकारों को भी साथ लेता गया था उसमें उस युग के प्रख्यात कलाकार हकीम अबीसेन को अपने यहाँ बुलाने के लिये बहुत यत्न किया। मध्ययुगीन चित्रकारों में हकीम साहब की बड़ी ख्याति थी। जबकि यह विख्यात कलाकार गजनवी के हाथों न लग सका तो उसने अपने चित्रकारों से उसकी लगभग चालीस चित्र आकृतियाँ बनवाकर अपने पड़ोसी राजाओं के पास भेजी किन्तु यह यत्न से भी उस कलाकार को पा सकने में गजनवी सफल नहीं रहा।[3] मुगलों के भारत में प्रवेश करने से पूर्व ही हिन्दू कलाकारों की प्रसिद्धि हो चुकी थी हिन्दू ग्रन्थों के चित्र बनाने में रामायण, महाभारत, पंचतंत्र, रसिक प्रिया का मुख्य स्थान रहा। इन चित्रित ग्रन्थों के माध्यम से ही चित्रकला की ख्याति जनता तक पहुँची और यही सत्य भी है। फिर भी मुगल बादशाहों द्वारा कुछ ने सिक्कों पर भी अपनी आकृतियाँ ढलवायी। खलीफा अब्दुल मालीक (684–705 ई.) और जहाँगीर (1605–1627 ई) के सिक्के इसके प्रमाण है। जहाँगीर के सिक्कों में उसकी प्रेयसी बेगम नूरजहाँ भी उसके साथ अंकित है। कुछ सिक्के भारतकला भवन वाराणसी में आज भी सुरक्षित है। मुस्लिम बादशाहों के समय में निर्मित कुछ कृतियों को देखकर प्रतीत होता है कि लगभग नवम शताब्दी से ही उनमें चित्रकला के प्रति रुचि हो गयी थी। और अकबर के समय में अभिरुचि बड़ी तेजी से फैली अकबर से पहले और उसके बाद भी इस्लाम के कट्टर अनुयायी कुछ धर्मप्राण मुसलमानों द्वारा चित्र और प्रतिमायें यथावसर विनष्ट किये जाते रहे।[4] अरबवासियों को चित्र और मूर्तियों से घृणा थी। कुछ जो तथ्य किसी प्रकार जीवित हैं और जिनको उस युग के इस्लाम समाज में बड़े पैमाने पर अपनाया जाता रहा उनको देखकर यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन इस्लाम में कला को प्रश्रय प्राप्त नहीं था बल्कि कला के नाम पर उन्हें जो कुछ भी मिला और परम्परा से जो भी सुरक्षित था उसको भी नष्ट कर दिया। सुल्तान फिरोजशाह (14वी. शा.) को स्वयं अपने घर में पर्दो, कुर्सियों, दरवाजों और दीवारों पर बने चित्र को धर्मभय के कारण पुतवा दिया अनेक उत्तम चित्रों पर स्याही या उनकी आकृतियाँ चुनवा दी गई। इस धार्मिक संकीर्णता के कारण उत्तम पोथियों और चित्रों को नष्ट कर दिया। चंगेज खाँ और उसके पौत्र हलाकु ने तो अपने विजित प्रदेशों में अवस्थित प्रतिमाओं तथा चित्रों को सर्वथा विनष्ट कर डाला था। बुखारा, नगदाद, नैशापुर आदि संस्कृति प्रधान प्राचीन नगरों को उक्त दोनों शासकों में सर्वथा ध्वस्त कर डाला था। शहंशाह अकबर के ऐतिहासिक पोथी खाने को 1739ई. में नादिरशाह ने और उसके रहे सहे भाग को रूहेलों ने अपहृत किया ये मुगलकालीन पोथियाँ बड़ी थी निर्दयता से नष्ट कर दी गयी।[5] कला के प्रति कुछ इस्लामी शासकों में यह मतभेद अन्त तक बना रहा। तुर्की सुलतान महमूद द्वितीय ने (1808–1839 ई.) ने जब अपनी शीघ्र तस्वीर को कुस्तुनतुनिया भी बारकों में रखने का आदेश दिया तो दूसरे लोगों ने धर्म विरुद्ध समझकर उसका प्रबल विरोध किया। विरोध यहाँ तक कि लगभग चार हजार मनुष्य उनकी भेंट चढ़े। किन्तु मुगलों का उद्देश्य कला की इस पुनीत थाती को विध्वस्त करना नहीं था अपितु भारत में अपने अस्तित्व की जड़े जमाना था। कला प्रेमी तो उनकी रगों में कूट–कूट कर भरा हुआ था। यहाँ तक कि इस्लाम के कटु निषेध और उनके प्रचार के प्रतिबद्ध भी मुगलों के कला प्रेम को कम न कर सके प्रकृति का मोह और सौन्दर्य दर्शन की भावना का समावेश उनके स्वभाव में जन्मतः ही था। बाबर और जहाँगीर के संस्मरणों को पढकर ज्ञात होता है कि स्वांतः सुखाय और आत्म शान्ति के लिए कई घण्टे एकांत में बैठकर प्रकृति का रसास्वादन किया करते थे। अकबर तो चित्र साधना को ईश्वरीय तथा ज्ञानवृद्धि का माध्यम स्वीकार करता है और इसीलिए ऐसे लोगों से वह घृणा रखता था जो चित्रकला के प्रति आस्था और अनुराग रखते थे। शहशांह अकबर पहला कला प्रेमी शासक था जिसमें भारतीय चित्रकला को जीवंत किया और अच्छे चित्रकारों को अपने यहाँ आदर पूर्वक आमंत्रित किया चित्रकारों की कृतियों पर पुरुस्कार देकर उन्हें प्रोत्साहित किया। किन्तु मुगलों को इमारतों के निर्माण करने का गजब का शौक था। इधर गुलाम वंशीय कुतुबुद्दीन ऐबक ने कुतुबमीनार को

बनाने में अपने इस शौक को प्रकट किया, जिसको कि इल्तुतमिश ने पूरा किया।[6] भारतीय चित्रकला के स्तर को उन्नत बनाने के लिए आज बड़ी आवश्यकता इस बात की है कि स्कूलों, कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में चित्रकला की शिक्षा के लिये जो घिसी–घिसायी परिपाटी चली आ रही है उसमें परिवर्तन हो राष्ट्रीय आधुनिकता कला वीथी (नेशनल गैलरी ऑफ मार्डन आर्ट) केक्यूरेट श्री प्रदोष दास गुप्त की अपने एकलेख में इस ओर संकेत करते हुये बताया है कि यह हमेशा जरूरी है कि कला के विकास और कला सम्बंधी शिक्षा इन दोनों के बीच एक उचित संतुलन रखा जाय आज की स्थिति से लगता है कि यह संतुलन गड़बड़ हो गया है, जिसका कारण यह है कि एक ओर तो कला का बहुत ज्यादा वैदिक विकास और दूसरी ओर जनता का कलाकारों को मान्यता न देना, क्योंकि उनकी कला का स्वरूप न समझ में आने योग्य है। कला का समाज में एक निश्चित काम है और अगर वह उस काम को पूरा न कर पाती तो वह एक गलत रूझान और एक झूठी रुख जैसी कुछ चीज रह जाती है। कला समाज में बिना किसी अवलम्ब आश्रय प्रोत्साहन और प्रलोभन के स्वतन्त्र स्वच्छन्द एवं सौम्य गति से निरन्तर आगे बढ़ती रहे क्योंकि वह हमारे आँगनों की वस्तु रही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 गैरोल वाचस्पति–भारतीय चित्रकला, पृ.सं.172–173.

2 नेहरू जवाहरलाल–हिन्दुस्तान की कहानी, पृ.सं.272.

3 वैश्य डॉ. रीता प्रताप–भारतीय चित्रकला एवं मूर्ति कला का इतिहास, पृ.सं.126–27.

4 वर्मा अविनाश बहादुर–भारतीय चित्रकला का इतिहास, पृ.सं.122.

5 वैश्य डॉ. रीता प्रताप–भारतीय चित्रकला एवं मूर्ति कला का इतिहास, पृ.सं.157.

6 गैरोल वाचस्पति–भारतीय चित्रकला, पृ.सं.176

7. आनन्द कुमार स्वामी–मुगल पेटिंग, पृ.सं.186.

*****